इराक : फर्जी चुनाव के बाद की असलियत

● सत्यम

अमेरिका आखिरकार इराक में ''लोकतंत्र'' ले ही आया। आखिर इसी दिन के लिए तो इराक पर लाखों टन बम बरसाए गए थे, हजारों लोगों की बलि चढ़ाई गई थी और पूरे देश को तहस-नहस कर दिया गया था। यह सब एक छोटी-सी कीमत थी–दुनिया के सबसे अनोखे चुनाव के लिए–ऐसा चुनाव जिसमें न तो प्रत्याशियों का अता-पता था, न मुद्दों का, न मतदाता सूचियों का। पूँजीवादी देशों का भोंपू अंतरराष्ट्रीय मीडिया लगातार इस चुनाव की ''सफलता'' का ढिंढोरा पीट रहा है। झूठ पर झूठ परोसे जा रहे हैं। इराकी चुनाव आयोग के प्रमुख ने पहले कहा कि 72 प्रतिशत वोट पड़े हैं, फिर कहा कि 60 प्रतिशत और फिर पत्रकारों के सवालों के जवाब में झेंपते हुए माना कि उनके पास कोई आँकड़े नहीं हैं और वे सुनी-सुनाई बातों के आधार पर अपना अनुमान बता रहे हैं। यह चुनाव कितना वास्तविक था इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि हर जगह अंतरराष्ट्रीय पर्यवेक्षक भेजने को आतुर रहने वाले अमेरिका ने कई अंतरराष्ट्रीय-संस्थाओं की माँग के बावजूद इराकी चुनाव में किसी स्वतंत्र पर्यवेक्षक को नहीं जाने दिया।

इराकी छापामारों द्वारा गिराये गये अमेरिकी हेलीकॉप्टर के सामने जश्न मनाते नौजवान और बच्चे

इराक की ढाई करोड़ की आबादी में से कुछ लाख लोगों ने अगर वोट डाला भी तो उसके पीछे सबसे बड़ी वजह यह उम्मीद थी कि चुनाव के बाद अमेरिकी और ब्रिटिश फौजें उनका देश छोड़कर चली जाएंगी। लेकिन ऐसा कुछ नहीं होने वाला!

इस फर्जी चुनाव के बाद बनने वाली नई सरकार में वही मुट्ठीभर अमेरिकी पिट्ठू होंगे जो खुद अपने और अपने साम्राज्यवादी आकाओं के सिवा किसी और का प्रतिनिधित्व नहीं करते। ऐसी सरकार पूरी तरह अमेरिकी फौजों के सहारे ही टिकी रह सकती है। इसलिए तय है कि डेढ़ लाख विदेशी सैनिक इराकी धारती को रौंदते रहेंगे। हर मंत्रालय और हर विभाग में पहले ही अमेरिकी 'सलाहकार' बैठाए जा चुके हैं और सरकार का कामकाज उनके इशारों पर ही चलेगा। इराक की समस्त पूँजी और तेल पर उन्हीं का नियंत्रण होगा। चुनाव के इस नाटक से बस इतना होगा कि एक कठपुतली सरकार की जगह दूसरी कठपुतली सरकार बैठ जायेगी। यहां तक कि सरकार में शामिल होने वाली ज्यादातर कठपुतलियाँ भी वही रहेंगी।

लेकिन यह सारा ड्रामा रचाकर भी अमेरिकी साम्राज्यवादियों को राहत नहीं मिलने वाली है। इराक में प्रतिरोधा संघर्ष उनकी तमाम कोशिशों के बावजूद लगातार ज्यादा संगठित और विस्तारित होता जा रहा है। इराकी विद्रोहियों के हमले दिनोंदिन ज्यादा घातक होते जा रहे हैं। पिछले कई महीनों में एक भी दिन ऐसा नहीं गुजरा है जब विद्रोहियों ने एक से ज्यादा हमले न किये हों। इस वर्ष जनवरी तक इराक में 1600 से ज्यादा विदेशी सैनिक मारे जा चुके हैं और दस हजार से ज्यादा घायल हुए हैं। इनमें ज्यादातर अमेरिकी हैं। इसके अलावा 5,500 से ज्यादा अमेरिकी सैनिक भगोड़े बन गये हैं। इनमें से ज्यादातर वे हैं जो छुट्टी पर घर गये और वापस इराक लौटने से इंकार कर दिया। ऐसे कई अमेरिकी सैनिकों ने कनाडा में शरणार्थी का दर्जा मांगा है। मानसिक रोगों से ग्रस्त अमेरिकी और ब्रिटिश सैनिकों की तादाद बढ़ती जा रही है। इराकी जनता के खिलाफ एक बर्बर और अन्यायपूर्ण युद्ध में शामिल होने का मानसिक तनाव इसका सबसे बड़ा कारण है।

प्रतिरोध संघर्ष सिर्फ तथाकथित ''सुन्नी त्रिकोण'' तक ही नहीं सिमटा है जैसा कि अमेरिका बार-बार दावा करता है। वह पूरे इराक में फैल चुका है–सुदूर उत्तर में जाखो से लेकर दक्षिण में फाओ तक। नसीरिया, अमारा, दिवानिया, हिल्ला, नजफ, बकूबा, मोसुल, किरकुक, तिकरित, कराबा, समावा, अब्रिल, सुलेमानिया और बगदाद–इराक के हर अहम शहर में

(पेज 21 पर जारी)

इराक : फर्जी चुनाव के बाद की असलियत

(पेज 19 से जारी)

संघर्ष जड़ें जमा चुका है। कई शहरों और कस्बों में तो कब्जावर फौजें और इराकी पुलिस गश्त लगाने से भी डरती हैं।

विद्रोहियों ने स्पेन सहित 10 देशों के सैनिकों को इराक छोड़ने पर मजबूर कर दिया है। हंगरी, पोलैंड और नीदरलैंड भी इस वर्ष के शुरू में अपनी फौजें वापस बुला लेंगे। पुनर्निर्माण के नाम पर इराक की लूट में हिस्सा बँटाने आई कई कंपनियों को भी विद्रोहियों ने भागने पर मजबूर कर दिया है। कई और कंपनियां तौल रही हैं कि इराक में रुकना कितना फायदेमंद होगा। हालत यह है कि उनके कुल बजट का आधे से अधिक सुरक्षा और बीमे का इंतजाम करने में ही खर्च हो जा रहा है।

इराक पर हमले के लिए अमेरिका ने जितने झूठ गढ़े थे, सब तार-तार हो चुके हैं। इराक में घातक हथियारों के जिस जखीरे को नष्ट करने के नाम पर हमला किया गया था, आज उसकी खोज तक बंद कर दी गई है। अबू गरेब जेल में कैदियों के साथ वहशियाना सलूक ने पूरी दुनिया के लोगों को बता दिया है कि अमेरिका इराक में किस तरह का लोकतंत्र और "आजादी" लाना चाहता है। यही वजह है कि खुद अमेरिका में बुश की इराक नीति का विरोध तेज होता जा रहा है।

अमेरिकी साम्राज्यवादियों ने सोचा था कि इराक को कुचलकर उसके तेल पर बड़ी आसानी से कब्जा कर लेंगे। लेकिन इराकी जनता के भीषण प्रतिरोध ने उनका सारा गणित बिगाड़कर रख दिया है। इराक में बढ़ते सैनिक खर्च के बोझ तले अमेरिकी अर्थव्यवस्था चरमरा रही है। वर्ष 2004 में अमेरिका का कुल सैन्य खर्च 437 अरब डालर था, जो 2001 के मुकाबले 50 प्रतिशत ज्यादा है। अमेरिका का बजट घाटा भयंकर हो चुका है और वह इस समय दुनिया का सबसे बड़ा कर्जदार देश है। अन्य साम्राज्यवादी देशों से अमेरिकी चौधराहट को कड़ी चुनौती मिल रही है। जिस दिन कई तेल उत्पादक देशों ने अपना कारोबार डालर के बजाय यूरो में करने का फैसला कर लिया, उस दिन अमेरिकी अथव्यवस्था की चूलें हिल जायेंगी।

बौखलाया अमेरिकी शासक वर्ग इसीलिए अपनी फौजी ताकत की नुमाइश करके दुनिया पर अपना दबदबा कायम रखने की बदहवासी भरी कोशिशें कर रहा है। लेकिन अफगानिस्तान और इराक ने उसकी फौजी ताकत की भी हेकड़ी ढीली कर दी है। दुनिया की जनता वियतनाम और कोरिया को नहीं भूली है जहां से पिटकर अमेरिका को भागना पड़ा था। लेकिन साम्राज्यवादी बार-बार इतिहास के इस सबक को भूलने का दुस्साहस करते रहते हैं कि हथियारों के बड़े से बड़े जखीरे भी जनसंघर्षों के महासमुद्र में डूब जाते हैं।

सुनामी : महज कुदरत का कहर नहीं

(पेज 20 से जारी)

शेयर सूचकांक देश की अर्थव्यवस्था का बैरोमीटर होता है। इस नजरिए से देखा जाए तो मतलब यही निकला कि जब प्राकृतिक आपदाएँ आती हैं तो शेयर बाजार खुश होता है। लेकिन शेयर बाजार खुश क्यों होता है? कारण साफ है! जब प्रलयंकारी लहरें सबकुछ तहस-नहस कर रही थीं तो पूँजी बाजार को यह उम्मीद बँधने लगी थी कि अब पुनर्निर्माण के नाम पर उसके खिलाड़ियों को मुनाफा कमाने का मौका हाथ लगेगा। पूँजीवाद का यह बुनियादी नियम है कि रुकी पड़ी पूँजी को चलायमान बनाने के लिए समय-समय पर पूँजीपति उत्पादन और उत्पादक शक्तियों का जानबूझकर विनाश करते हैं। कभी लाखों टन अनाज समुद्र में फेंक दिया जाता है तो कभी युद्ध और प्राकृतिक आपदाएँ उन्हें यह मौका दे देते हैं। इसके बाद पुनर्निर्माण के नाम पर पूँजी फिर गतिशील हो जाती है और मुनाफे का कारोबार खूब फलता-फूलता है।

हर आपदा के समय एक बात दिखाई देती है कि पशु-पक्षियों को पहले से संकेत मिल जाते हैं। इस बार भी ऐसा ही हुआ। और तो और, अंडमान-निकोबार में रहने वाले जनजातीय लोगों ने भी समुद्र के संकेतों को पहचान लिया और समय रहते ही पहाड़ियों में चले गये। तमाम आशंकाओं के बावजूद उनका बहुत कम नुकसान हुआ। क्या आपने कभी सोचा है कि ऐसा क्यों होता है? पूरा मानव समाज प्रकृति का ही विस्तार है। लेकिन वर्ग समाज में मनुष्य न सिर्फ एक-दूसरे से कटता और दूर होता चला गया है बल्कि प्रकृति से भी दूर होता चला गया है। पूँजीवाद ने प्रकृति से इस अलगाव को और बढ़ाया ही है क्योंकि उसके लिए तो प्रकृति महज एक संसाधन है मुनाफा पैदा करने का। यहां तक कि प्रकृति की सुंदरता भी एक बिकाऊ चीज है। ऐसे समाज में मनुष्य प्रकृति की आवाज को कैसे सुन सकेगा?

सुनामी की तबाही एक बार फिर एक ऐसा समाज बनाने की जरूरत की याद दिलाती है जिसमें इंसान न तो प्रकृति का गुलाम होगा और न ही उसका व्यापारी, बल्कि पूरा मानव समाज मिलकर प्रकृति की शक्तियों को इंसानियत की तरक्की में लगाने के लिए काम करेगा। ऐसे समाज के केन्द्र में मुनाफे की हवस नहीं बल्कि पूरी मानवता का साझा हित होगा।

नौजवानों के लिए जरूरी

भगतसिंह की पाँच पुस्तिकाएँ

- मैं नास्तिक क्यों हूँ? और ड्रीमलैण्ड की भूमिका
- क्रान्तिकारी कार्यक्रम का मसविदा
- बम का दर्शन और अदालत में बयान
- जाति-धर्म के झगड़े छोड़ो, सही लड़ाई से नाता जोड़ो
- भगतसिंह ने कहा

प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें : जनचेतना, डी-68, निरालानगर, लखनऊ